बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 21

चुनाव और कानून व्यवस्था

देश में 17वीं लोकसभा और चार विधानसभा के लिए सात चरण में होने वाले चुनाव 11 अप्रैल से 19 मई तक 39 दिन चलेंगे। सन 1999 में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) का चलन शुरू होने के बाद ये सबसे लंबे चुनाव होंगे। सन 1951-52 में देश का पहला आम चुनाव 25 अक्टूबर से 21 फरवरी तक चार महीने चला था, उसके बाद से यह दूसरा सबसे लंबा चुनाव होगा।

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि अतीत में जब देश में बैलेट पेपर पर भी काफी कम समय में चुनाव हो चुके हैं तो फिर इस बार इतनी लंबी प्रक्रिया क्यों। इस सवाल के जवाब का एक पहलू तो यह है कि देश में मतदाताओं की तादाद बहुत तेजी से बढ़ी है क्योंकि भारत दुनिया का सबसे बड़ी आबादी वाला लोकतांत्रिक देश है। सन 1951 में देश में 17.3 करोड़ मतदाता थे, 2019 में इनकी तादाद 90 करोड़ का आंकड़ा पार करने की उम्मीद है।

अगर 2014 के आम चुनाव की तर्ज पर 66 फीसदी मतदान का अनुमान रखा जाए तो करीब 59.4 करोड़ मतदाता अपने मताधिकार का प्रयोग करेंगे। यह दुनिया के सबसे शक्तिशाली लोकतांत्रिक देश अमेरिका की आबादी से भी अधिक है। कश्मीर से अंडमान और निकोबार द्वीप समूह तक कई लाख मतदान केंद्र स्थापित किए जाएंगे। ऐसे में बुनियादी सुविधाएं और सुरक्षा इंतजाम मुहैया कराने के मोर्चे पर निर्वाचन आयोग के समक्ष काफी बड़ी चुनौती है। अगर हर चरण के बीच सात दिन का अंतराल न होता तो प्रक्रिया छोटी हो सकती थी। इसके चलते ईवीएम की रखवाली के लिए स्ट्रॉन्ग रूम पर सुरक्षा बलों की तैनाती का अनावश्यक बोझ उत्पन्न होगा।

चुनाव की तिथियों का ब्योरा हमारे देश में शासन के एक अन्य पहलू की ओर ध्यान आकृष्ट करता है। 80 लोकसभा सीटों वाले और 24 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले उत्तर प्रदेश के बारे में तो माना जा सकता है कि उसके लिए सात चरण में चुनाव कराया जा रहा है लेकिन कुछ छोटे राज्यों के लिए कई चरण के चुनाव कराना अजीब है। उदाहरण के लिए 48 सीटों एवं 30 लाख वर्ग किलोमीटर में फैले महाराष्ट्र में चार चरण में और 42 सीटों तथा 88 हजार वर्ग किमी में फैले पश्चिम बंगाल में सात चरण में चुनाव कराए जाने हैं। 40 सीटों और 94 हजार वर्ग किमी वाले बिहार, 14 सीट और 79 हजार वर्ग किमी वाले झारखंड और 29 सीटों तथा 30 लाख वर्ग किमी भू क्षेत्र वाले मध्य प्रदेश तथा ओडिशा (21 सीट, 15 लाख वर्ग किमी भूक्षेत्र) में भी चार चरण में मतदान कराया जा रहा है।

ऐसे सवालों का जवाब प्राय: इन राज्यों में कानून व्यवस्था की स्थिति के रूप में सामने आता है। पश्चिम बंगाल और बिहार में राजनीतिक हिंसा का पुराना सिलसिला रहा है। पश्चिम बंगाल में 2018 में जिस तरह भारतीय जनता पार्टी के कार्यकर्ताओं की हत्या हुई है, उससे अंदाजा लगता है कि राज्य में 2019 के चुनाव शांतिपूर्ण नहीं होने वाले। सांप्रदायिक तनाव ने मुख्य दलों की प्रतिस्पर्धा को और हवा दी है। झारखंड, मध्य प्रदेश और ओडिशा में माओवादी अशांति चुनाव आयोग के समक्ष सुरक्षा की एक अलग ही चुनौती पेश करती है। न तो यहां की राज्य सरकारें और न ही केंद्र सरकार इस संकट का कोई हल निकाल सकी है। सन 2017 में आई फिल्म न्यूटन में इसे बखूबी दर्शाया गया था। ऐसी ही अशांति का विस्तारित स्वरूप जम्मू कश्मीर में देखने को मिलता है जहां छह लोकसभा सीट के लिए पांच चरण में मतदान होगा। ऐसे में स्पष्ट है कि लंबी निर्वाचन प्रक्रिया की एक अहम वजह कानून व्यवस्था की स्थिति है।

अजय मोहंती

ऊर्जा पहुंच का लक्ष्य कितना हुआ हासिल ?

जिस तरह केवल आय के आधार पर गरीबी का आकलन नहीं किया जा सकता है उसी तरह ऊर्जा विपन्नता को भी समझने के कई पैमाने होते हैं। बता रहे हैं **अरुणाभ घोष**

भारत ने पिछले वर्षों में अपने करोड़ों नागरिकों तक ऊर्जा पहुंचाने के मामले में उल्लेखनीय प्रगति की है। आपूर्ति में आई तेजी ने ऊर्जा पहुंच के मामले में राजनीतिक वादों और नीतिगत क्रियान्वयन के बीच की खाई पाटने का काम किया है। अब हमें नीतिगत क्रियान्वयन और जमीनी हकीकत के बीच का फासला दूर करना है।

जब संपोषणीय विकास लक्ष्यों को वर्ष 2015 में अंगीकार किया गया था तो भारत के करीब 4 करोड़ घरों तक बिजली नहीं पहुंची थी और 10 करोड़ से अधिक घरों में खाना बनाने के लिए जलावन वाली लकड़ी और गोबर से बने उपलों का इस्तेमाल होता था। उस समय भारत में ऊर्जा पहुंच से वंचित दुनिया के सर्वाधिक लोग थे।

फिर अचानक ही हालात तेजी से बदलने लगे। अक्टूबर 2017 में शुरू की गई सौभाग्य योजना के तहत करीब 2.5 करोड़ परिवारों को बिजली कनेक्शन दिए जा चुके हैं। उज्ज्वला योजना के तहत भी 6.5 करोड़ परिवारों को भी रसोई गैस (एलपीजी) सिलिंडर मिल चुके हैं। इसका असर यह हुआ है कि एलपीजी सिलिंडरों की पहुंच आज 85 फीसदी से भी अधिक परिवारों तक हो चुकी है जबकि 2015 में यह संख्या 60 फीसदी ही थी। हमें इसके लिए जिम्मेदार व्यक्ति को इसका श्रेय देना चाहिए।

लेकिन ऊर्जा पहुंच का मतलब केवल कनेक्शन देना नहीं है। जिस तरह गरीबी का आकलन केवल आय के आधार पर नहीं हो सकता है, उसी तरह ऊर्जा विपन्नता को समझने के कई पैमाने होते हैं। ग्रिड से जुड़ा कनेक्शन किसी काम का नहीं है अगर उन तारों में बिजली न प्रवाहित होती हो। अगर ग्रामीण क्षेत्रों में एलपीजी सिलिंडर समुचित मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं तो घरों में खाना पकाने के लिए परंपरागत ऊर्जा साधनों का इस्तेमाल जारी रहेगा। अगर ऊर्जा सेवाएं लगातार नहीं मिल रही हैं तो लोग दोबारा ऊर्जा विपन्नता की स्थिति में पहुंच जाएंगे।

समय के साथ ऊर्जा पहुंच की न्यूनतम सीमारेखा भी बढ़ जाएगी। एक बिजली बल्ब और पंखा चलाने भर की मांग आगे चलकर रेफ्रिजरेटर और टेलीविजन चलाने लायक बिजली कनेक्शन की मांग में तब्दील हो सकती है। घरों के भीतर चलने वाले छोटे कारोबार (जैसे सिलाई) के लिए भरोसेमंद बिजली आपूर्ति की जरूरत पड़ेगी। बात यह है कि अपेक्षाएं बढ़ने के साथ आज पर्याप्त लग रही ऊर्जा कल के लिए कम पड़ जाएगी।

काउंसिल ऑन एनर्जी, एनवायरनमेंट ऐंड वाटर (सीईईडब्ल्यू) ने ऊर्जा पहुंच के आकलन के लिए एक बहुआयामी, बहुस्तरीय ढांचा विकसित किया है। खाना पकाने के लिए काउंसिल ने प्राथमिक रसोई ईंधन की उपलब्धता, खाना बनाने वाले स्टोव का स्वास्थ्य पर पड़ने वाले असर, खाना बनाने की गुणवत्ता और सुविधा के अलावा इसका खर्च उठाने की क्षमता जैसे बिंदुओं को ध्यान में रखा।

बिजली पहुंच का मामला भी बहुआयामी है। बिजली कनेक्शनों की भार क्षमता, आपूर्ति की अवधि, बिजली की गुणवत्ता (अधिक वोल्टेज होने पर इलेक्ट्रॉनिक उपकरण खराब हो जाते हैं और कम वोल्टेज होने पर वे चल ही नहीं पाते हैं), विश्वसनीयता (हर महीने होने वाले ब्लैकआउट दिनों की संख्या), वहन-क्षमता और कनेक्शन की कानूनी स्थिति जैसे पहलू होते हैं। हरेक आयाम को एक स्तर दिया गया है। किसी घर का समग्र स्तर निम्नतम स्तर के बरक्स होता है ताकि नीति-निर्माताओं और जमीनी स्तर पर सक्रिय लोगों को सबसे कमजोर कड़ी का पता चल सके। सीईईडब्ल्यू ने इस बहुआयामी ढांचे का इस्तेमाल अपने एक्सेस सर्वे में भी किया है। वर्ष 2015 में कोलंबिया यूनिवर्सिटी और 2018 में नैशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर एवं इनिशिएटिव फॉर सस्टेनेबल एनर्जी पॉलिसी के सहयोग से ये सर्वे किए गए। बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, ओडिशा, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल के ग्रामीण इलाकों में इस सर्वे को अंजाम दिया गया। सर्वे में 50 लाख से अधिक आंकड़े हैं जो भारत और शायद दुनिया में भी इसे ऊर्जा पहुंच से संबंधित सबसे बड़ा पैनल डेटा बनाते हैं।

उपभोक्ता-केंद्रित दृष्टिकोण से आंशिक समझ ही पैदा होती है। मसलन, झारखंड में 60 फीसदी ग्रामीण परिवार रोशनी के लिए ग्रिड बिजली का इस्तेमाल कर रहे थे वहीं आपूर्ति के औसत घंटे शायद ही कम हुए। उत्तर प्रदेश में रोशनी के लिए बिजली का इस्तेमाल करने वाले घरों की संख्या में तीन-चौथाई वृद्धि देखी गई लेकिन यहां पर मुफ्त में बिजली कनेक्शन दिए जाने पर भी उसे लेने के लिए तैयार नहीं होने वाले लोगों की संख्या सर्वाधिक थी। बिजली कनेक्शन की संख्या और आपूर्ति अवधि के मामले में सबसे अच्छा प्रदर्शन करने वाले पश्चिम बंगाल में भी वर्ष 2015 के बाद बिजली आपूर्ति की विश्वसनीयता एवं गुणवत्ता में गिरावट देखी गई है। इसके चलते कई परिवार बिजली उपभोग के मामले में फिर से निचली कतार में पहुंच गए हैं।

खाना बनाने के लिए जरूरी ऊर्जा के मामले में शून्य स्तर से ऊपर बढ़ने वाले परिवारों में 42 फीसदी उज्ज्वला योजना के लाभार्थी थे। इसके बावजूद दो-तिहाई परिवार अब भी मुफ्त में मिलने वाले जैव ईंधन, दोबारा सिलिंडर भरवाने के लिए पैसे न होने, रीफिलिंग के लिए दूर जाने की समस्या और परिवारों के भीतर फैसले होने की जटिलता के चलते टियर-1 में फंसे हुए हैं।

मसलन, पश्चिम बंगाल के ग्रामीण इलाकों के 59 फीसदी परिवारों में महिलाओं ने ही दोबारा सिलिंडर भरवाने के फैसले में अहम भूमिका निभाई है। वहीं मध्य प्रदेश में यह अनुपात महज 16 फीसदी रहा है। केवल गैस कनेक्शन दे देने से यह गारंटी नहीं दी जा सकती है कि महिलाएं खाना पकाने के स्वच्छ ईंधन का इस्तेमाल करने ही लगेंगी।

उपभोक्ता-केंद्रित नजरिया नीतिगत डिजाइन में भी मदद करता है। एक्सेस सर्वे से सामने आया कि 84 फीसदी परिवारों ने केरोसिन सब्सिडी के स्थान पर सौर लालटेन पर सब्सिडी लेने को वरीयता दी। इसी तरह अधिकतर परिवार ग्रामीण क्षेत्रों में एलपीजी पर अधिक सब्सिडी दिए जाने के साथ ही उनके वितरण में भी सुधार होते हुए देखना चाहते हैं।

व्यवस्थागत समस्याएं भी नए परिप्रेक्ष्य से देखी जाती हैं। सीईईडब्ल्यू ने आईएसईपी के साथ किए गए एक अन्य सर्वे में यह पाया कि उत्तर प्रदेश के 84 फीसदी ग्रामीण और शहरी बिजली उपभोक्ता बिजली चोरी के लिए अब कटिया मारने के बारे में नहीं सोचते हैं। इसके बजाय बिजली मीटर और बिल बनाने में गड़बड़ियां होने से भुगतान से जुड़ी शिकायतें आती हैं। उत्तर प्रदेश के केवल 45 फीसदी घरों में ही बिजली मीटर लगे हुए हैं। अगर मासिक बिल नहीं भेजे जाते हैं तो अधिकांश उपभोक्ताओं को यह यकीन ही नहीं होता है कि बिल मीटर की गणना के आधार पर जारी किया गया है। इसका नतीजा बिजली कंपनियों और उपभोक्ताओं के बीच भरोसे की कमी होने लगती है। अगर ग्रामीण क्षेत्रों में भी हर महीने बिजली बिल बनाए जाएं तो वहां के उपभोक्ता भी शहरी उपभोक्ताओं की तरह समय पर बिल भुगतान करने लगेंगे।

ऊर्जा पहुंच एक जुड़ी हुई शृंखला नहीं है। इसलिए हम यह न पूछें कि क्या आपके पास बिजली कनेक्शन है, हां या ना? इसके बजाय यह पूछें क्या आपको सेवा मिल रही है, कैसे? ऊर्जा जरूरतें समय के साथ बढ़ेंगी।

घरों तक ऊर्जा पहुंच सुनिश्चित करने की इस जंग में मिली कामयाबी से पता चलता है कि एक बड़ी लड़ाई जीती जा चुकी है। हालांकि परिवारों का अनुभव बेहतर करने और उपभोक्ताओं का भरोसा जीतने में अभी वक्त लगेगा।

(लेखक काउंसिल ऑन एनर्जी, एनवायरनमेंट ऐंड वाटर के सीईओ हैं)

पोषण, प्रकृति और आजीविका से बना रहे खानपान का नाता

जमीनी हकीकत

सुनीता नारायण

सही खानपान के अभाव में गरीब देशों में स्वास्थ्य समस्याएं बनी रहती हैं। लोगों के पास जैसे ही थोड़ा पैसा आने लगता है उन्हें वक्त पर भोजन मिलने लगता है लेकिन वे स्वास्थ्य मामले में लाभ की स्थिति भी गंवाने लग जाते हैं। दरअसल वे नमक, चीनी और वसा की अधिकता वाले प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों का सेवन करने लगते हैं जो उन्हें मोटा और बीमार बनाने लगता है। हालांकि जब समाज में समृद्धि काफी बढ़ जाती है तब उन्हें सही खानपान से होने वाले लाभों का अहसास होता है।

यह विडंबना ही है कि भारत में ये सारी स्थितियां एक साथ घट रही हैं। कुपोषण की बड़ी चुनौती के साथ ही हम मोटापे और उससे जुड़ी मधुमेह एवं उच्च रक्तचाप की बीमारियों का भी सामना कर रहे हैं। लेकिन हमें इस मामले में थोड़ी बढ़त भी हासिल है कि हम सही खानपान की अपनी संस्कृति अभी तक भूले नहीं हैं। अब भी पोषण, प्रकृति और आजीविका के तार जुड़े हुए हैं। करोड़ों भारतीयों को अब भी थोड़ा भोजन ही मिलता है क्योंकि ये अधिकतर गरीब हैं। हमारे सामने यह चुनौती और सवाल है कि इनके पास पैसे आने पर भी क्या वे पहले की तरह प्रकृति से मिले खाद्यान्नों से बना पौष्टिक भोजन ही करते रहेंगे? यह असली परीक्षा है।

लेकिन ऐसा करने के लिए हमें अपनी खानपान की आदतें ठीक करनी होंगी। हमें समझना होगा कि पैसे आने पर गलत खानपान से अपनी स्वास्थ्य बढ़त को गंवा देना महज आकस्मिक नहीं है। ऐसा प्रसंस्कृत खाद्य उद्योग के कारण है क्योंकि सरकारों ने पोषण के मामलों में नियमन बंद कर दिया है। इस तरह उन्होंने शक्तिशाली खाद्य उद्योग को हमारे जीवन कारोबार के सबसे अहम तत्त्व खानपान का नियंत्रण अपने हाथ में लेने का मौका दे दिया है।

हमें यह समझने की भी जरूरत है कि गलत खानपान का संबंध कृषि के बदलते तरीकों से जुड़ा हुआ है। इस तरह खाद्य कारोबार एकीकृत एवं उद्योग का रूप ले लेता है। यह मॉडल सस्ते भोजन की आपूर्ति पर बना हुआ है जिसमें रासायनिक पदार्थ मौजूद होते हैं। नाम भले ही बदल जाए लेकिन खानपान में मौजूद कीटनाशक एवं एंटीबॉडी का बस स्वरूप ही बदलता है।

दरअसल हमें कृषि वृद्धि के ऐसे मॉडल की जरूरत है जो स्थानीय स्तर पर उपजने वाले बढ़िया खाद्यान्नों को अहमियत दे। इस मॉडल में पहले कीटनाशकों का इस्तेमाल कर उससे सबक सीखने की प्रवृत्ति से परहेज किया जाएगा। भले ही इस मॉडल को अपनाना मुश्किल है लेकिन ऐसा करने से ही हमें पोषणयुक्त आहार मिलने के साथ आजीविका की सुरक्षा भी मिल सकेगी। फिर भी खाद्य सुरक्षा व्यवसाय का डिजाइन ऐसा है कि साफ-सफाई एवं मानकों पर ध्यान दिया जाए। लेकिन नियमन के लिए खाद्य निरीक्षकों की जरूरत पड़ने से निगरानी की लागत बढ़ जाती है। विडंबना है कि इस मॉडल में वही चीज बाहर रह जाती है जो हमारे शरीर और सेहत के लिए सबसे अच्छी है, यानी छोटे किसान और स्थानीय खाद्य कारोबार। हमारे पास बड़ा कृषि-कारोबार बचा रह जाता है जिसकी हमें जरूरत ही नहीं होती है।

लेकिन इसी के साथ हमें गलत तरह के खानपान के खिलाफ संरक्षण की भी जरूरत है। सरकारें यह नहीं कह सकती हैं कि प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ का सेवन निजी पसंद का मामला है। सरकारें किनारे खड़े रहते हुए उद्योग जगत को प्रसंस्कृत उत्पाद के सेवन के लिए उपभोक्ताओं को लुभाते एवं मनाते हुए नहीं देखती रह सकती है। लोग जिसे भोजन मानते हैं असल में वह जंक फूड और सेहत के लिए नुकसानदायक है।

भारतीय खाद्य संरक्षा एवं मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) दो प्रमुख नियमों के प्रस्ताव पर बैठा हुआ है। किसी भी खाद्य उत्पाद को 'जंक' श्रेणी में रखना और बच्चों के खाद्य उत्पादों में पौष्टिक एवं स्वास्थवर्द्धक वस्तुओं को जगह देने के लिए स्कूलों को सलाह देने के नियम शामिल हैं।

यह विलंब ताकतवर एवं संगठित खाद्य प्रसंस्कृत उद्योग के चलते हो रहा है। यह उद्योग नहीं चाहता है कि डिब्बाबंद उत्पादों के पैक पर चीनी, नमक या वसा की मात्रा से संबंधित जानकारी अंकित की जाए। ऐसा होने पर पता चल जाएगा कि हम निर्धारित दैनिक सीमा से कितना अधिक चीनी, नमक या वसा खा ले रहे हैं। इस मसौदा अधिसूचना का मकसद यह सुनिश्चित करना था कि उपभोक्ताओं के तौर पर हमें पता चल जाए कि अपने पसंदीदा सॉफ्ट ड्रिंक की एक बोतल पीने से दो दिन के बराबर चीनी गटक जाएंगे। इसी तरह हमें यह भी पता चल जाएगा कि अपने बच्चों को नूडल्स का एक कटोरा परोसने का मतलब है कि उस दिन बाकी समय उन्हें नमक-रहित उबली हुई सब्जियां ही देनी होंगी। वहीं लेबलिंग को लेकर जारी मसौदा अधिसूचना में आहार मानकों के बरक्स नमक, चीनी और वसा की मात्रा की जानकारी देने की बात कही गई है। इससे हम एक उपभोक्ता के तौर पर कोई भी प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद इस्तेमाल करने का फैसला सटीक जानकारी के आधार पर कर पाएंगे। लेकिन ऐसा करना उस उद्योग के लिए खासा असुविधाजनक हो जाएगा जो जंक खाद्य उत्पाद बनाता है और उनमें किसी तरह की पौष्टिकता भी नहीं होती है।

इतना ही काफी नहीं है। भारत में हमें खानपान की अपनी समृद्ध परंपरा का जश्न मनाने की भी जरूरत है जिसमें रंग, स्वाद, मसालों और प्रकृति की विविधता है। हमें यह जानने की जरूरत है कि अगर जंगल में जैव-विविधता खत्म होती है तो हमारे प्लेट में रखे भोजन की गुणवत्ता भी कम हो जाएगी। फिर भोजन निजी पसंद का मामला नहीं रह जाएगा। यह सभी की पसंद एवं स्वाद के लिहाज से बना पैकेज रह जाएगा। आज यही हो रहा है जहां हम प्लास्टिक कैन से प्लास्टिक फूड खा रहे हैं।

हम जो खाते हैं और किसलिए खाते हैं, के बीच रिश्ता जोड़ने की जरूरत है। अगर हम स्थानीय पकवानों के बारे में जानकारी खोते जाएंगे तो हम स्वाद एवं सुगंध के अलावा भी कुछ गंवाएंगे। हम जिंदगी भी गंवा देते हैं और हमारा भविष्य भी चपेट में आ जाता है।

(लेखिका सेंटर फॉर साइंस ऐंड एनवायरनमेंट से संबद्ध हैं)

कानाफूसी

लोकसभा चुनाव: नाराजगी का सबब

ऐसा लगता है कि कांग्रेस की राज्य इकाइयों में सबकुछ ठीकठाक नहीं चल रहा है। कर्नाटक में कई लोग इस बात से नाराज हैं कि पार्टी जनता दल सेक्युलर को आठ से नौ लोकसभा सीटें देने को तैयार है। कुछ लोगों ने तो नाराज होकर भारतीय जनता पार्टी की सदस्यता लेने की धमकी भी दी है। उनकी धमकी यह भी है कि पार्टी के वरिष्ठ नेता मल्लिकार्जुन खड़गे समेत पार्टी के वरिष्ठ नेताओं के समक्ष अपनी उम्मीदवारी भी पेश कर सकते हैं। इसी प्रकार महाराष्ट्र कांग्रेस के विधायक दल के नेता राधाकृष्ण विखे पाटिल इसलिए नाराज हैं क्योंकि पार्टी शिरडी लोकसभा सीट वाम दलों को दे सकती है। हरियाणा में पूर्व मुख्यमंत्री भूपेंद्र सिंह हुड्डा ने धमकी दी है कि अगर पार्टी के शीर्ष नेतृत्व द्वारा उनकी यूं ही अनदेखी की जाती रही तो वह एक नया दल गठित करेंगे।

भारत पिता मोदी

अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम (एआईएडीएमके) और भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के बीच के रिश्तों में एआईएडीएमके प्रमुख जे जयललिता के निधन के बाद अभूतपूर्व बदलाव देखने को मिल रहा है। मार्च 2016 में केंद्रीय मंत्री पीयूष गोयल ने जयललिता पर जबरदस्त हमला बोलते हुए कहा था कि तमिलनाडु राज्य के भीतर एक अलग राज्य है। अब 2019 में गोयल जयललिता की गरीब समर्थक पहलों की तारीफ करते और उन्हें सच्चा राष्ट्रवादी घोषित करते देखे जा सकते हैं। उधर तमिलनाडु के दुग्ध एवं डेरी विकास मंत्री के टी राजेंद्र बालाजी ने तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को देश का पिता ही घोषित कर दिया है। जब उन्हें याद दिलाया गया कि जयललिता जिन्हें लोग प्यार से अम्मा कहते थे, वह मोदी के साथ गठबंधन के लिए कभी तैयार नहीं हुईं तो बालाजी ने कहा कि जब अम्मा हमारे बीच नहीं हैं तो मोदी हमारे पिता हैं, वह देश के पिता हैं।

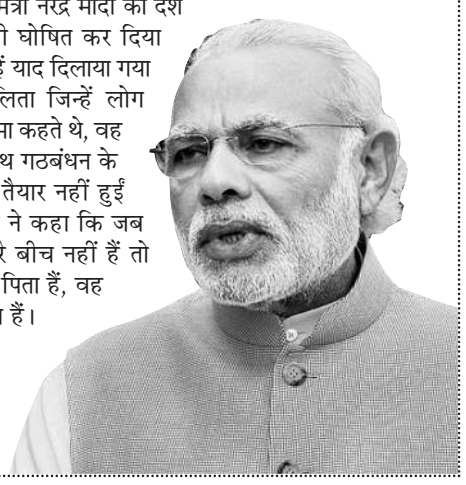

आपका पक्ष

महिला सशक्तीकरण की जरूरत

सिंधु घाटी सभ्यता देश की प्राचीनतम सभ्यता है। करीब 4,000 वर्ष पुरानी यह सभ्यता मातृसत्तात्मक थी। मातृ देवी की प्रतिमा समेत कई उदाहरण दर्शाते हैं कि उस समय स्त्रियों को उच्च स्थान प्राप्त था। दुर्भाग्यवश इतने वर्ष बाद भी हम विकास के बावजूद पतन की ओर ही बढ़ रहे हैं और महिलाओं को बराबर का हक दिलाने में असफल रहे हैं। गौरतलब है कि 8 मार्च को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस का आयोजन किया गया। इस बार संयुक्त राष्ट्र की थीम 'थिंक इक्वल, बिल्ड स्मार्ट, इनोवेट फॉर चेंज' थी। यह इस बात को दर्शाता है कि अब विश्व स्तर पर यह महसूस किया जा रहा है कि महिलाओं की स्थिति ठीक नहीं है। आज महिलाएं सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक रूप से पिछड़ी हुई हैं। वैश्विक स्तर पर स्टार्टअप के मामले में महिलाएं लैंगिक भेदभाव की शिकार हो रही हैं। पिछले वर्ष जारी बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप की एक

रिपोर्ट के मुताबिक पुरुषों के स्टार्टअप को औसतन 21 लाख डॉलर का निवेश मिलता है, वहीं महिलाओं को 9.35 लाख डॉलर का निवेश मिल पाया। लेकिन महिला नेतृत्व वाली स्टार्टअप से 1 रुपये में 78 पैसे लाभ अर्जित होते हैं, जबकि पुरुष नेतृत्व में मात्र 32 पैसे लाभ अर्जित हुए। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अगर

देश में महिला सशक्तीकरण के लिए महिलाओं को शिक्षित करना जरूरी है

महिलाओं को सशक्त कर उन्हें अवसर दिए जाएं तो बड़ा परिवर्तन लाया जा सकता है। भारत आज विश्व की तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था है लेकिन महिला सशक्तीकरण के मामले में भारत पीछे है। विश्व लैंगिक समानता सूचकांक में विश्व के 144 देशों में भारत 108वें पायदान पर है। देश में घरेलू हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, बाल विवाह तथा महिलाओं पर अत्याचार कम नहीं हुए हैं। स्थिति यह है कि जिस देश में महिलाओं को देवी माना जाता है आज वह स्वयं भगवान भरोसे है। आज भी सार्वजनिक स्थलों में महिला सुरक्षा बड़ी चुनौती है। इसलिए ऐसे उपाय करने की जरूरत है जिसमें महिलाएं सुरक्षित रह सकें तथा पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल सकें। महिला सशक्तीकरण से कई बीमारियों का इलाज संभव है। जब एक पुरुष शिक्षित होता है तो एक घर संवरता है लेकिन एक महिला के शिक्षित होने से पीढ़ियां संवर जाती हैं।

सुमित यादव, कालपी

लोकसभा चुनाव की अधिसूचना

अगले लोकसभा चुनाव के लिए चुनाव आयोग ने तारीख की घोषणा कर दी है। इसके साथ ही आदर्श आचार संहिता लागू हो गई है। इसके तहत केंद्र या राज्य सरकार कोई भी ऐसी नीतिगत फैसला नहीं ले सकती है जिससे मतदाता प्रभावित हों। चुनाव 11 अप्रैल से 19 मई तक सात चरणों में मतदान होगा तथा 23 मई को मतगणना होगी। आयोग के मुताबिक इस बार करीब 90 करोड़ मतदाता अपने मताधिकार का उपयोग कर सकेंगे। पिछले लोकसभा चुनाव में यह संख्या 84.3 करोड़ थी। चुनाव के लिए 10.35 लाख मतदान केंद्र बनाए जाएंगे तथा इस बार वीवीपीएटी का इस्तेमाल किया जाएगा। चुनाव में काफी खर्च होते हैं क्योंकि पूरे देश में चुनाव कराने में कई लोगों की जरूरत पड़ती है। तकनीक के युग में खर्च को कम करने की दिशा में प्रयास किए जाने चाहिए।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।